मुचलिन्दमूले पठमाभिसम्बुद्धो। तेन खो पन समयेन भगवा सत्ताहं एकपल्लङ्केन निसिन्नो होति विमुत्तिसुखपटिसंवेदी।

तेन खो पन समयेन महा अकालमेघो उदपादि सत्ताहवद्दलिका सीतवातदुद्दिनी। अथ खो मुचलिन्दो नागराजा सकभवना निक्खमित्वा भगवतो कायं सत्तक्खत्तुं भोगेहि परिक्खिपित्वा उपरिमुद्धनि महन्तं फणं विहच्च अट्ठासि—"मा भगवन्तं सीतं, मा भगवन्तं उण्हं, मा भगवन्तं डंसमकसवातातपसरीसपसम्फस्सो" ति।

अथ खो भगवा तस्स सत्ताहस्स अच्चयेन तम्हा समाधिम्हा वुट्ठासि। अथ खो मुचलिन्दो नागराजा विद्धं विगतवलाहकं देवं विदित्वा भगवतो काया भोगे विनिवेठेत्वा सकवण्णं पटिसंहरित्वा माणवकवण्णं अभिनिम्मिनित्वा भगवतो पुरतो अट्ठासि पञ्जलिको भगवन्तं नमस्समानो।

[B.88] २. अथ खो भगवा एतमत्थं विदित्वा तायं वेलायं इमं उदानं उदानेसि—

"सुखो विवेको तुट्ठस्स, सुतधम्मस्स पस्सतो।
अब्यापज्जं सुखं लोके, पाणभूतेसु संयमो॥"

---

२. मुचलिन्दवर्ग

१. मुचलिन्दसूत्र : : नागराज मुचलिन्द के प्रति भगवान् की प्रसन्नता

१. ऐसा मैंने सुना है। एक समय भगवान् (बुद्ध) ऊरुवेला में नेरञ्जरा नदी के तट पर स्थित मुचलिन्द वृक्ष की छाया में विराजमान थे। उस समय उनको अभिसम्बोधि प्राप्त हुए कुछ ही समय बीता था। तब भगवान् उस मुचलिन्द वृक्ष की छाया में सप्ताहपर्यन्त, एक ही आसन से विराजमान (समाधिनिष्ठ) रहते हुए अनुपम विमुक्तिसुख का अनुभव करते रहे।

इसी अन्तराल में, वहाँ असमय में (ऋतु के विना) ही काली घटाओं वाले तथा सप्ताह-पर्यन्त टिके रहने वाले बड़े बड़े बादल आकाश में उमड़ आये, जिनके कारण होती हुई वर्षा से शरीर को कष्टदायक ठण्ठी हवाएँ बहने लगीं। तब मुचलिन्द नाम का एक नागराज (विशाल सर्प) अपने भवन (बिल) से निकल कर भगवान् के शरीर पर अपना शरीर सात वार लपेट कर, तथा उनके शिर पर अपना फण फैलाकर, इसलिये बैठा रहा कि इस दुर्दिन में भगवान् के शरीर पर ठण्ढी या गर्म ऋतु का कोई दुष्प्रभाव न पड़े, और न ही किसी मच्छर मक्खी या साँप बिच्छू के काटने से कोई वेदना हो।

तदनन्तर, एक सप्ताह का समय बीतने पर, भगवान् का उस समाधि से उत्थान हुआ। उधर, मुचलिन्द नागराज भी आकाश में घिरी हुई घटाओं के बिखर जाने पर, ऋतु के अनुकूल हो जाने पर, भगवान् के शरीर पर लिपटे हुए अपने शरीर को हटाकर, मानव शरीर धारण कर, हाथ जोड़कर प्रणाम करता हुआ भगवान् के सम्मुख खड़ा हो गया।

२. तब भगवान् ने मुचलिन्द नागराज द्वारा उनके प्रति की गयी सेवा से प्रसन्न होकर उस समय यह हृदयोद्गार प्रकट किया—

२२. अथ खो भगवा एतमत्थं विदित्वा तायं वेलायं इमं उदानं उदानेसि—

"यत्थ आपो च पठवी, तेजो वायो न गाधति।
न तत्थ सुक्का जोतन्ति, आदिच्चो नप्पकासति॥"
"न तत्थ चन्दिमा भाति, तमो तत्थ न विज्जति।
[B.87] यदा च अत्तना वेदि, मुनि मोनेन ब्राह्मणो।
अथ रूपा अरूपा च, सुखदुक्खा पमुच्चती" ति॥

अयं पि उदानो वुत्तो भगवता इति मे सुतं ति।

बोधिवग्गो पठमो।

तस्सुद्दानं

तयो बोधि च हुंहुङ्को, ब्राह्मणो कस्सपेन च।
अजसङ्गामजटिला, वाहियेना ति दसा ति॥

२. मुचलिन्दवग्गो

१. मुचलिन्दसुत्तं

[N.73, R.10] १. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा उरुवेलायं विहरति नज्जा नेरञ्जराय तीरे

बाहिय दारुचीरिय ज्ञानी था। उसने धर्मानुसार ही आचरण किया है। उसने अपने धर्माचरण से मुझको कभी कुछ भी उद्विग्न नहीं किया। भिक्षुओ! बाहिय दारुचीरिय का परिनिर्वाण हो चुका है"।

२२. तदनन्तर, भगवान् ने इस समस्त घटना पर अपना यह हृदयोद्गार प्रकट किया—

"जहाँ न पृथ्वी है, न जल है, न तेज या वायु की पहुँच है। न तारागण की चमक है, न सूर्य का प्रकाश॥

"और जहाँ न चन्द्रमा की कान्ति ही है। फिर भी वहाँ कुछ भी अन्धकार नहीं है॥

साधक मुनि ब्राह्मण मौन साधना द्वारा जब आत्म-ज्ञान प्राप्त कर लेता है तब वह इस अद्वितीय स्थान पर पहुँच जाता है और वह रूपमय, अरूपमय एवं सुख-दुःखमय संसार से मुक्त हो जाता है।"

भगवान् ने इस प्रसङ्ग में यह हृदयोद्गार भी प्रकट किया—ऐसा मैंने सुना है"॥

बोधिवर्ग प्रथम समाप्त॥

इस वर्ग (में व्याख्यात सूत्रों) की सूची

१. प्रथम बोधिसूत्र, २. द्वितीय बोधिसूत्र, ३. तृतीय बोधिसूत्र, ४. हुंहुङ्कसूत्र, ५. ब्राह्मणसूत्र, ६. महाकाश्यपसूत्र, ७. अजकलापकसूत्र, ८. संग्रामजित्सूत्र, ९. जटिलसूत्र, १०. बाहियसूत्र॥

अथ खो बाहियस्स दारुचीरियस्स भगवतो इमाय सङ्खित्ताय धम्मदेसनाय तावदेव अनुपादाय आसवेहि चित्तं विमुच्चि।

अथ खो भगवा बाहियं दारुचीरियं इमिना सङ्खित्तेन ओवादेन ओवदित्वा पक्कामि। अथ खो अचिरपक्कन्तस्स भगवतो बाहियं दारुचीरियं गावी तरुणवच्छा अभिपातेत्वा जीविता वोरोपेसि।

[N.72] अथ खो भगवा सावत्थियं पिण्डाय चरित्वा पच्छाभत्तं पिण्डपातपटिक्कन्तो सम्बहुलेहि भिक्खूहि सद्धिं नगरम्हा निक्खमित्वा अद्दस बाहियं दारुचीरियं कालङ्कतं; दिस्वान भिक्खू आमन्तेसि—"गण्हथ, भिक्खवे, बाहियस्स दारुचीरियस्स सरीरकं; मञ्चकं आरोपेत्वा नीहरित्वा झापेथ; थूपञ्ञस्स करोथ। सब्रह्मचारी वो, भिक्खवे, कालङ्कतो" ति।

"एवं, भन्ते" ति खो ते भिक्खू भगवतो पटिस्सुत्वा बाहियस्स दारुचीरियस्स सरीरकं मञ्चकं आरोपेत्वा नीहरित्वा झापेत्वा थूपञ्ञस्स कत्वा येन भगवा तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदिंसु। एकमन्तं निसिन्ना खो ते भिक्खू भगवन्तं एतदवोचुं—"दड्ढं, भन्ते, बाहियस्स दारुचीरियस्स सरीरं, थूपो चस्स कतो। तस्स का गति, को अभिसम्परायो" ति? "पण्डितो, भिक्खवे, बाहियो दारुचीरियो पत्तपादि [R.9] धम्मस्सानुधम्मं; न च मं धम्माधिकरणं विहेसेसि। परिनिब्बुतो, भिक्खवे, बाहियो दारुचीरियो" ति।

भगवान् की यह संक्षिप्त धर्मदेशना सुनने के साथ ही बाहिय दारुचीरिय का चित्त आश्रवों से सर्वथा मुक्त हो गया।

भगवान् भी उस बाहिय दारुचीरिय को इस संक्षिप्त धर्मदेशना से उपदेश कर भिक्षाटन हेतु आगे बढ़ गये। भगवान् कुछ ही दूर आगे बढ़े होंगे कि एक क्रुद्ध गौ ने, जिसके साथ उसका छोटा बच्चा था, बाहिय दारुचीरिय को गिराकर सींगों के आघात से मार डाला।

तब भगवान् ने श्रावस्ती में भिक्षाटन कर, नगर से निकलकर कुछ भिक्षुओं के साथ विहार में प्रवेश करते समय मार्ग में बाहिय दारुचीरिय को मृत अवस्था में देखा। उसे देखकर भगवान् ने भिक्षुओं को आदेश दिया—"भिक्षुओ! इस बाहिय दारुचीरिय के शरीर को उठाओ, मञ्च पर रखकर ले जाकर जला दो। और उस स्थान पर (इसकी स्मृति में) एक स्तूप बना दो। भिक्षुओ! यह तुम्हारा साथी गुरुभाई था जो अब मर गया है।"

"अच्छा, भन्ते!" कहकर भिक्षुओं ने भगवान् की आज्ञा शिरोधार्य की और बाहिय दारुचीरिय के उस मृत शरीर को उठाकर मञ्च पर रख कर जला दिया और उस पर, उसकी स्मृति में, एक स्तूप भी बना दिया। तदनन्तर, वे भिक्षु भगवान् के सम्मुख गये। वहाँ जाकर, उनको प्रणाम कर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे उन भिक्षुओं ने भगवान् से निवेदन किया—"भन्ते! आपके आदेशानुसार, हमने बाहिय दारुचीरिय का मृत शरीर जला दिया और उस स्थान पर उसकी स्मृति में एक स्तूप भी बना दिया। भन्ते! मरणानन्तर उस बाहिय की क्या गति हुई है? वह अब किस योनि में गया है?" (भगवान् ने कहा—) "भिक्षुओ!

भन्ते, भगवा धम्मं; देसेतु सुगतो धम्मं, यं ममस्स दीघरत्तं हिताय सुखाया'' ति। एवं वुत्ते, भगवा बाहियं दारुचीरियं एतदवोच—''अकालो खो ताव, बाहिय; अन्तरघरं पविट्ठस्स पिण्डाया'' ति।

दुतियं पि खो बाहियो दारुचीरियो भगवन्तं एतदवोच—''दुज्ञानं खो पनेतं, भन्ते, भगवतो वा जीवितन्तरायानं मय्हं वा जीवितन्तरायानं। देसेतु मे, भन्ते, भगवा धम्मं; देसेतु [R.8] सुगतो धम्मं, यं ममस्स दीघरत्तं हिताय सुखाया'' ति। दुतियं पि खो भगवा बाहियं दारुचीरियं एतदवोच—''अकालो खो ताव, बाहिय; अन्तरघरं पविट्ठम्हा पिण्डाया'' ति।

ततियं पि खो बाहियो दारुचीरियो भगवन्तं एतदवोच—''दुज्ञानं खो पनेतं, भन्ते, भगवतो वा जीवितन्तरायानं मय्हं वा जीवितन्तरायानं। देसेतु मे भन्ते, भगवा धम्मं, देसेतु सुगतो धम्मं, यं ममस्स दीघरत्तं हिताय सुखाया'' ति।

२१. ''तस्मातिह ते, बाहिय, एवं सिक्खितब्बं—'दिट्ठे दिट्ठमत्तं भविस्सति, सुते सुतमत्तं भविस्सति, मुते मुतमत्तं भविस्सति, विञ्ञाते विञ्ञातमत्तं भविस्सती' ति। एवं हि ते, बाहिय, सिक्खितब्बं। यतो खो ते, बाहिय, दिट्ठे दिट्ठमत्तं भविस्सति, सुते सुतमत्तं भविस्सति, मुते मुतमत्तं भविस्सति, विञ्ञाते विञ्ञातमत्तं भविस्सति, ततो त्वं, बाहिय, न [B.86] तेन। यतो त्वं, बाहिय, न तेन ततो त्वं, बाहिय, न तत्थ; यतो त्वं, बाहिय, न तत्थ, ततो त्वं, बाहिय, नेविध न हुरं न उभयमन्तरेन। एसेवन्तो दुक्खस्सा'' ति।

को धर्मदेशना करने की कृपा करें। सुगत ! मुझको ऐसी धर्मदेशना करें जो मेरे लिये दीर्घकाल तक हितकर एवं सुखकर हो।'' ऐसा कहते हुए बाहिय को भगवान् ने समझाया ''बाहिय। यह समय धर्मदेशना के लिए उपयुक्त नहीं है; क्योंकि मैं इस समय भिक्षाटन कर रहा हूँ।''

बाहिय दारुचीरिय ने पुनः दूसरी बार भगवान् से निवेदन किया—''भन्ते ! आपके या मेरे जीवन का क्या आश्वासन है! कब किस पर क्या सङ्कट आ पड़े! अतः आप मुझे इसी समय ऐसी धर्मदेशना करें जो मेरे लिये दीर्घकाल तक हितकर एवं सुखावह हो।'' किन्तु भगवान् ने पुनः पूर्ववत् ही उत्तर दिया।

तीसरी बार भी बाहिय दारुचीरिय ने पुनः वही पूर्ववत् निवेदन किया।

२१. (भगवान् ने कहा—) ''तो बाहिय ! तुमको यह शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये—'दृष्ट में दृष्टमात्र ही होगा, श्रुत में श्रुतमात्र ही होगा, स्मृत में स्मृतमात्र ही होगा तथा विज्ञात में विज्ञातमात्र ही होगा। बाहिय ! तुमको ऐसा सीखना चाहिये। बाहिय! जब तेरा दृष्ट में दृष्टमात्र ही सम्बन्ध होगा, श्रुत में श्रुतमात्र ही, स्मृत में स्मृतमात्र ही तथा विज्ञात में विज्ञातमात्र ही सम्बन्ध होगा तो, बाहिय! तूँ उससे कथमपि सम्पृक्त नहीं कहलायगा। बाहिय! जब उससे तेरा या उसका तुझसे कोई सम्पर्क ही न होगा, तो तूँ वहाँ नहीं होगा। बाहिय! जब तूँ वहाँ होगा ही नहीं, तब उस दशा में, बाहिय! न इस लोक में न परलोक में न दोनों लोकों के बीच में ही तेरी कोई सत्ता होगी। बाहिय! यही स्थिति दुःखों का अन्त कहलाती है।''

"अथ के चरहि सदेवके लोके अरहन्तो वा अरहत्तमग्गं वा समापन्ना" ति?

"अत्थि, बाहिय, उत्तरेसु जनपदेसु सावत्थि नाम नगरं। तत्थ सो भगवा एतरहि विहरति अरहं सम्मासम्बुद्धो। सो हि बाहिय, भगवा अरहा चेव अरहत्ताय च धम्मं देसेती" ति।

अथ खो बाहियो दारुचीरियो ताय देवताय संवेजितो तावदेव सुप्पारकम्हा पक्कामि। सब्बत्थ एकरत्तिपरिवासेन येन सावत्थि जेतवनं अनाथपिण्डिकस्स आरामो तेनुपसङ्कमि। [B.85] तेन खो पन समयेन सम्बहुला भिक्खू अब्भोकासे चङ्कमन्ति। अथ खो बाहियो दारुचीरियो येन ते भिक्खू तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा ते भिक्खू एतदवोच—"कहं नु खो, भन्ते, एतरहि भगवा विहरति अरहं सम्मासम्बुद्धो? दस्सनकामम्हा मयं तं भगवन्तं अरहन्तं सम्मासम्बुद्धं" ति?

"अन्तरघरं पविट्ठो खो, बाहिय, भगवा पिण्डाया" ति।

२०. अथ खो बाहियो दारुचीरियो तरमानरूपो जेतवना निक्खमित्वा सावत्थिं पविसित्वा अद्दस भगवन्तं सावत्थियं पिण्डाय चरन्तं पासादिकं पसादनीयं सन्तिन्द्रियं [N.71] सन्तमानसं उत्तमदमथसमथमनुप्पत्तं दन्तं गुत्तं यतिन्द्रियं नागं। दिस्वान येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवतो पादे सिरसा निपतित्वा भगवन्तं एतदवोच—"देसेतु मे,

---

"तब इस देवलोकसहित संसार में कौन अर्हत् या अर्हन्मार्गरूढ है?"

"बाहिय! उत्तर जनपदों में श्रावस्ती नामक नगर है। वहाँ इस समय भगवान् अर्हत् सम्यक्सम्बुद्ध विराजमान हैं। वाहिय! ये भगवान् अर्हत्त्वप्राप्ति या अर्हत्त्वमार्ग के आरोहण के लिये धर्म का उपदेश करते हैं।"

तब वह बाहिय दारुचीरिय, उस देवता द्वारा संवेजित एवं उत्साहित किये जाने पर, उसी समय शूर्पारक से श्रावस्ती नगर के प्रति प्रस्थान कर गया। मार्ग में वह कहीं भी एक रात्रि से अधिक न ठहर कर शीघ्र ही श्रावस्ती में अनाथपिण्डिक द्वारा निर्मापित जेतवनविहार में पहुँच गया। उस समय वहाँ बहुत से भिक्षु खुले मैदान में चंक्रमण कर रहे थे। वह बाहिय दारुचीरिय उन भिक्षुओं के पास जाकर पूछने लगा—"भन्ते! भगवान् अर्हत् सम्यक्सम्बुद्ध इस समय साधना हेतु कहाँ विराजमान हैं। मैं उन भगवान् अर्हत् सम्यक्सम्बुद्ध के दर्शन करना चाहता हूँ।"

"बाहिय! इस समय भगवान् भिक्षाटनहेतु गृहस्थों के घरों की ओर गये हैं।"

२०. तब बाहिय दारुचीरिय ने जेतवन से शीघ्रतया निकलकर श्रावस्ती में प्रवेश कर भिक्षा करते हुए भगवान् के दर्शन किये। उस समय भगवान् का रूप मनोहर एवं नयनाभिराम था, उनकी इन्द्रियाँ शान्त थीं, हृदय प्रसन्न था, ये यम दम शम एवं नियम से सम्पृक्त थे और निष्पाप थे। उनको देखते ही वह बाहिय उनके सम्मुख गया और वहाँ जाते ही वह भगवान् के श्रीचरणों में अपना शिर टिका कर भगवान् से यों निवेदन करने लगा—"भन्ते! आप मुझ

[B.84] १८. अथ खो भगवा एतमत्थं विदित्वा तायं वेलायं इमं उदानं उदानेसि—

"न उदकेन सुची होति, बह्वेत्थ न्हायती जनो।
यम्हि सच्चं च धम्मो च, सो सुची सो च ब्राह्मणो" ति॥

१०. बाहियसुत्तं

१९. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति जेतवने अनाथपिण्डिकस्स आरामे। तेन खो पन समयेन बाहियो दारुचीरियो सुप्पारके पटिवसति समुद्दतीरे सक्कतो [N.70] गरुकतो मानितो पूजितो अपचितो लाभी चीवरपिण्डपातसेनासनगिलानपच्चय-भेसज्जपरिक्खारानं। अथ खो बाहियस्स दारुचीरियस्स रहोगतस्स पटिसल्लीनस्स एवं चेतसो परिवितक्को उदपादि—"ये खो केचि लोके अरहन्तो वा अरहत्तमग्गं वा समापन्ना, अहं तेसं अञ्ञतरो" ति।

[R.7] अथ खो बाहियस्स दारुचीरियस्स पुराणसालोहिता देवता अनुकम्पिका अत्थकामा बाहियस्स दारुचीरियस्स चेतसा चेतोपरिवितक्कमञ्ञाय येन बाहियो दारुचीरियो तेनुप-सङ्कमि; उपसङ्कमित्वा बाहियं दारुचीरियं एतदवोच—"नेव खो त्वं, बाहिय, अरहा ना पि अरहत्त मग्गं वा समापन्नो। सा पि ते पटिपदा नत्थि याय त्वं अरहा वा अस्स अरहत्तमग्गं वा समापन्नो" ति।

---

१८. तब भगवान् ने इन जटिल परिव्राजकों की यह स्नानक्रिया देखकर अपना यह हृदयोद्गार प्रकट किया—

"उदक से मानसिक शुद्धि नहीं हुआ करती, भले ही आदमी कितना भी नहाता रहे। हाँ, जिसके हृदय में सत्य एवं धर्म की प्रतिष्ठा हो चुकी है, वही पुरुष वस्तुतः 'शुद्ध' है तथा वही 'ब्राह्मण' कहलाने का अधिकारी भी है॥"

१०. बाहियसूत्र

: : भगवान् द्वारा बाहिय भिक्षु की प्रशंसा

१९. ऐसा मैंने सुना है। एक समय भगवान् (बुद्ध) श्रावस्ती में अनाथपिण्डिक श्रेष्ठी द्वारा निर्मापित जेतवन विहार में साधना हेतु विराजमान थे। उस समय बाहिय दारुचीरिय समुद्र तट पर स्थित शूर्पारक नामक बन्दरगाह पर रहता था। जहाँ वह जनता द्वारा अतिशय सत्कृत, मानित, पूजित था। वहाँ उसे चीवर, पिण्डपात, शयनासन तथा रुग्ण होने पर पथ्य एवं औषध का भी अतीव लाभ होता था। तब कभी एकान्त में बैठे उस बाहिय दारुचीरिय के मन में यह विचार हुआ—"लोक में इस समय जितने भी अर्हत् या अर्हन्मार्गरूढ साधक हैं, उनमें एक मैं भी हूँ।"

तब बाहिय दारुचीरिय की कोई रक्तसम्बन्धिनी अतएव हितकारिणी देवता उस पर अनुकम्पा करती हुई स्वचित्त से उसके चित्त का विचार जानकर उसके पास आयी और उसको यह बोली—"बाहिय ! तुम न तो अभी अर्हत् हो, न अर्हन्मार्गारूढ ही; क्योंकि तुम्हारा वह साधनामार्ग ही नहीं है, जिस पर चलकर तुम अर्हत् या अर्हन्मार्गारूढ हो पाते।"

अथ खो आयस्मा सङ्गामजि तं दारकं नेव ओलोकेसि ना पि आलपि। अथ खो आयस्मतो सङ्गामजिस्स पुराणदुतियिका अविदूरं गन्त्वा अपलोकेन्ती अद्दस आयस्मन्तं [N.69] सङ्गामजिं तं दारकं नेव ओलोकेन्तं ना पि आलपन्तं। दिस्वानस्सा एतदहोसि—"न चायं समणो पुत्तेन पि अत्थिको" ति। ततो पटिनिवत्तित्वा दारकं आदाय पक्कामि। अद्दसा खो भगवा दिब्बेन चक्खुना विसुद्धेन अतिक्कन्तमानुसकेन आयस्मतो सङ्गामजिस्स पुराण-दुतियिकाय एवरूपं विप्पकारं।

१६. अथ खो भगवा एतमत्थं विदित्वा तायं वेलायं इमं उदानं उदानेसि—

"आयन्तिं नाभिनन्दति, पक्कमन्तिं न सोचति।
सङ्गा सङ्गामजिं मुत्तं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं" ति॥

९. जटिलसुत्तं

१७. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा गयायं विहरति गयासीसे। तेन खो पन समयेन सम्बहुला जटिला सीतासु हेमन्तिकासु रत्तीसु अन्तरट्ठके हिमपातसमये गयायं उम्मुज्जन्ति पि निमुज्जन्ति पि उम्मुज्जनिमुज्जं पि करोन्ति ओसिञ्चन्ति पि अग्गिं पि जुहन्ति—"इमिना सुद्धी" ति।

अद्दसा खो भगवा ते सम्बहुले जटिले सीतासु हेमन्तिकासु रत्तीसु अन्तरट्ठके हिम-पातसमये गयायं उम्मुज्जन्ते पि निमुज्जन्ते पि उम्मुज्जनिमुज्जं पि करोन्ते ओसिञ्चन्ते पि अग्गिं पि जुहन्ते—"इमिना सुद्धी" ति।

तो भी आयुष्मान् संग्रामजित् ने न तो उस बालक को देखा, न उससे कोई बात ही की। उसकी पूर्वपत्नी ने दूर जाकर, छिपकर देखा तो वह समझ गयी—"इस श्रमण को पुत्र से भी कोई मोह नहीं है।" अतः वह लौटकर पुत्र को लेकर अपने घर चली गयी। भगवान् ने उस स्त्री की इस समस्त घटना को अपने मानवदुर्लभ दिव्यचक्षु से देख लिया।

१६. तब भगवान् ने इस घटना पर गम्भीरता से विचार करते हुए उस समय यह हृदयोद्गार प्रकट किया—

"जिसने आती हुई का अभिनन्दन नहीं किया तथा जाती हुई के लिये कोई पश्चात्ताप नहीं किया, ऐसे इस संग्रामजित् को मैं सांसारिक सङ्ग (संसर्ग) से मुक्त समझता हूँ। ऐसे वीतराग साधक को ही मैं 'ब्राह्मण' कहता हूँ॥"

९. जटिलसूत्र : : भगवान् के मत में वास्तविक शुद्धि

१७. ऐसा मैंने सुना है। एक समय भगवान् (बुद्ध) गया के गयाशीर्ष पर्वत पर साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय बहुत से जटिल परिव्राजक हेमन्त ऋतु की शीत रात्रियों में अन्तराष्टक के भीषण हिमपात के समय भी गया (नदी) में स्नान करते थे, उसमें डुबकी लगाते थे तथा वहाँ से निकल कर तर्पण करते हुए अग्नि में हवन भी करते थे; क्योंकि उनकी दृष्टि में यह भी शुद्धि की एक विधि थी।

मन्तं ठितो खो सो ब्राह्मणो भगवन्तं एतदवोच—"कित्तावता नु खो, भो गोतम, ब्राह्मणो होति, कतमे च पन ब्राह्मणकारणा धम्मा" ति?

८. अथ खो भगवा एतमत्थं विदित्वा तायं वेलायं इमं उदानं उदानेसि—

"यो ब्राह्मणो बाहितपापधम्मो, निहुंहुङ्को निक्कसावो यतत्तो।
वेदन्तगू वूसितब्रह्मचरियो, धम्मेन सो ब्रह्मवादं वदेय्य।
यस्सुस्सदा नत्थि कुहिञ्चि लोके" ति॥

(म. व., वि. पि., पि. ५)

५. ब्राह्मणसुत्तं

९. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति जेतवने अनाथपिण्डिकस्स आरामे। तेन खो पन समयेन आयस्मा च सारिपुत्तो आयस्मा च महामोग्गल्लानो आयस्मा च महाकस्सपो आयस्मा च महाकच्चानो आयस्मा च महाकोट्ठिको आयस्मा च महाकप्पिनो आयस्मा च महाचुन्दो आयस्मा च अनुरुद्धो आयस्मा च रेवतो आयस्मा च नन्दो येन भगवा
[R.4] तेनुपसङ्कमिंसु।
[B.81] अद्दसा खो भगवा ते आयस्मन्ते दूरतो व आगच्छन्ते; दिस्वान भिक्खू आमन्तेसि—"एते, भिक्खवे, ब्राह्मणा आगच्छन्ति; एते, भिक्खवे, ब्राह्मणा आगच्छन्ती" ति। एवं वुत्ते,

---

ओर खड़े हुए उसने भगवान् से यह प्रश्न किया—"भो गौतम! ब्राह्मण कितने धर्मों से युक्त होता है, अर्थात् ब्राह्मणकारक धर्म कौन से होते हैं?"

८. तब भगवान् ने ब्राह्मण के प्रश्न की गम्भीरता को समझते हुए अपना यह हृदयोद्गार प्रकट किया—

"उस पुरुष को ही ब्राह्मण कहना चाहिये जिसके समग्र पापधर्म नष्ट हो गये हों, जो निरभिमान होकर अपने चित्तविकारों को विनष्ट कर चुका हो, जो वेदों के अन्तिम निष्कर्ष (मोक्ष-निर्वाण) को प्राप्त कर चुका हो तथा जिसने अपनी धर्मसाधना पूर्ण कर ली हो। इस लोक में जो अपने उपदेशों में ब्रह्मज्ञान के अतिरिक्त अन्य किसी धर्म का प्रवचन नहीं करता हो, इस लोक में ऐसे पुरुष से श्रेष्ठ (उत्तम) कोई अन्य नहीं है।" (म. व., वि. पि. पृष्ठ-५)

५. ब्राह्मणसूत्र :: ब्राह्मणत्व की परिभाषा

९. ऐसा मैंने सुना है। एक समय भगवान् (बुद्ध) श्रावस्ती के अनाथपिण्डिक श्रेष्ठी द्वारा निर्मापित जेतवन विहार में साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय आयुष्मान् सारिपुत्र,... महामौद्गल्यायन,...महाकाश्यप,...महाकात्यायन,...महाकौष्ठिक,...महाकप्पिन,...महाचुन्द,... अनुरुद्ध,...रेवत एवं आयुष्मान् नन्द जहाँ भगवान् विराजमान थे, वहाँ आ रहे थे।

भगवान् ने उन आयुष्मानों को वहाँ आते हुए दूर से ही देख लिया। देखते ही भगवान् भिक्षुओं से यह बोले—"देखो, भिक्षुओ! ये ब्राह्मण आ रहे हैं। ये ब्राह्मण आ रहे हैं!"

८. सङ्गामजिसुत्तं

१५. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति जेतवने अनाथपिण्डिकस्स आरामे। तेन खो पन समयेन आयस्मा सङ्गामजि सावत्थिं अनुप्पत्तो होति भगवन्तं दस्सनाय। अस्सोसि खो आयस्मतो सङ्गामजिस्स पुराणदुतियिका—"अयं किर सङ्गामजि सावत्थिं अनुप्पत्तो" ति। सा दारकं आदाय जेतवनं अगमासि।

तेन खो पन समयेन आयस्मा सङ्गामजि अञ्ञतरस्मिं रुक्खमूले दिवाविहारं निसिन्नो होति। अथ खो आयस्मतो सङ्गामजिस्स पुराणदुतियिका येनायस्मा सङ्गामजि तेनुपसङ्कमि, उपसङ्कमित्वा आयस्मन्तं सङ्गामजिं एतदवोच—"खुद्दपुत्तं हि, समण, पोस मं" ति। एवं वुत्ते, आयस्मा सङ्गामजि तुण्ही अहोसि।

दुतियं पि खो आयस्मतो सङ्गामजिस्स पुराणदुतियिका आयस्मन्तं सङ्गामजिं एतदवोच—"खुद्दपुत्तं हि, समण, पोस मं" ति। दुतियं खो आयस्मा सङ्गामजि तुण्ही अहोसि।

[B.83] ततियं पि खो आयस्मतो सङ्गामजिस्स पुराणदुतियिका आयस्मन्तं सङ्गामजिं एतदवोच—"खुद्दपुत्तं हि, समण, पोस मं" ति। ततियं पि खो आयस्मा सङ्गामजि तुण्ही अहोसि।

अथ खो आयस्मतो सङ्गामजिस्स पुराणदुतियिका तं दारकं आयस्मतो सङ्गामजिस्स पुरतो निक्खिपित्वा पक्कामि—"एसो ते, समण, पुत्तो; पोस नं" ति।

---

८. संग्रामजित् सूत्र

: : संग्रामजित् के सङ्ग-त्याग से भगवान् प्रसन्न

१५. ऐसा मैंने सुना है। एक समय भगवान् (बुद्ध) श्रावस्ती के अनाथपिण्डिक श्रेष्ठी के जेतवन विहार में साधना हेतु विराजमान थे। उस समय कभी आयुष्मान् संग्रामजित् भी भगवान् के दर्शन हेतु श्रावस्ती में आये। उसी समय उसकी पहले की पत्नी को भी ज्ञात हो गया कि आयुष्मान् संग्रामजित् श्रावस्ती में आये हुए हैं। यह सुनकर वह अपने पुत्र को लेकर जेतवन में आयी।

उस समय आयुष्मान् संग्रामजित् किसी वृक्ष के नीचे बैठे हुए दिन की धर्म-साधना में लीन थे। तब उनकी वह पूर्वपत्नी भी वहाँ पहुँच गयी और उनसे यह बोली—"श्रमण! इस छोटे बच्चे के साथ मेरे पालन-पोषण का भी विचार कीजिए!" ऐसा कहे जाने पर भी आयुष्मान् संग्रामजित् मौन ही रहे। उससे कुछ नहीं बोले।

दूसरी बार भी उनकी पूर्वपत्नी...पूर्ववत्...तीसरी बार भी...पूर्ववत्...उससे कुछ नहीं बोले।

तब आयुष्मान् संग्रामजित की उस पूर्वपत्नी ने छोटे बच्चे को उनके सामने रखकर कहा—"श्रमण! यह बालक तुम्हारा पुत्र है, इसका पालन-पोषण अब तुम ही करो।" यह कहकर वह वहाँ से चल दी।

भवनिरोधो, भवनिरोधा जातिनिरोधो, जातिनिरोधा जरामरणं सोकपरिदेवदुक्खदोमनस्सुपायासा निरुज्झन्ति। एवमेतस्स केवलस्स दुक्खक्खन्धस्स निरोधो होती'' ति।

४. अथ खो भगवा एतमत्थं विदित्वा तायं वेलायं इमं उदानं उदानेसि—

''यदा हवे पातुभवन्ति धम्मा, आतापिनो झायतो ब्राह्मणस्स।
अथस्स कङ्खा वपयन्ति सब्बा, यतो खयं पच्चयानं अवेदी'' ति॥

(म. व., वि. पि., पि. ४)

३. ततियबोधिसुत्तं

५. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा उरुवेलायं विहरति नज्जा नेरञ्जराय तीरे बोधिरुक्खमूले पठमाभिसम्बुद्धो। तेन खो पन समयेन भगवा सत्ताहं एकपल्लङ्केन निसिन्नो [B.79] होति विमुत्तिसुखपटिसंवेदी। अथ खो भगवा तस्स सत्ताहस्स अच्चयेन तम्हा समाधिम्हा वुट्ठहित्वा रत्तिया पच्छिमं यामं पटिच्चसमुप्पादं अनुलोमपटिलोमं साधुकं मनसाकासि—

[N.65] ''इति इमस्मिं सति इदं होति, इमस्सुप्पादा इदं उप्पज्जति, इमस्मिं असति इदं न होति, इमस्स निरोधा इदं निरुज्झति; यदिदं—अविज्जापच्चया सङ्खारा, सङ्खारपच्चया विञ्ञाणं, विञ्ञाणपच्चया नामरूपं, नामरूपपच्चया सळायतनं, सळायतनपच्चया फस्सो, फस्स-

---

वेदना के निरोध से तृष्णा का निरोध, तृष्णा के निरोध से उपादान का निरोध, उपादान के निरोध से भव का निरोध; भव के निरोध से जाति (जन्म) का निरोध; जाति के निरोध से जरामरण, शोक, परिदेव, दुःख, दौर्मनस्य एवं उपायास निरुद्ध हो जाते हैं।''

४. तब भगवान् ने प्रतीत्यसमुत्पाद के आश्रयण से अपने इस चिन्तन मनन की गम्भीरता का अनुभव करते हुए अपना यह हृदयोद्गार प्रकट किया—

''जब साधना में उत्साहसम्पन्न, ध्यानाभ्यासरत, किसी ज्ञानवान् विप्र (ब्राह्मण) को चिन्तन मनन करते हुए ये उपर्युक्त धर्म पूर्णतः हृदयस्थ हो जाते हैं तो, इस क्षयपरम्परा के सम्यग्ज्ञान के कारण, उसकी सभी सांसारिक आकांक्षाएँ (तृष्णा=ऊहापोह) स्वतः क्षीण होने लगती हैं॥'' (द्र० : म. व., वि. नि., पृष्ठ-४)

३. तृतीय बोधिसूत्र : : ज्ञानी भिक्षु का लोक में सूर्यवत् प्रकाश

५. ऐसा मैंने सुना है। एक समय भगवान् (बुद्ध) ऊरुवेला में...पूर्ववत्...रात्रि के अन्तिम प्रहर में भगवान् ने प्रतीत्यसमुत्पाद नियम का **अनुलोम** एवं **प्रतिलोम** क्रम से आश्रयण कर यह चिन्तन मनन किया—

'' 'इसके होने पर यह होता है', या 'इसके उत्पन्न होने पर यह उत्पन्न होता है'; या इसके न होने पर यह नहीं होता', 'इसके निरुद्ध होने पर यह निरुद्ध हो जाता है'। जैसे—

अनुलोमक्रम—''अविद्या के कारण संस्कार उत्पन्न होते हैं, संस्कारों के कारण विज्ञान...पूर्ववत्...। इस प्रकार इस समस्त दुःखस्कन्ध (संसार) का समुदय (उत्पाद) होता है।

१२. अथ खो भगवा एतमत्थं विदित्वा तायं वेलायं इमं उदानं उदानेसि—

"अनञ्ञपोसिमञ्ञातं, दन्तं सारे पतिट्ठितं।
खीणासवं वन्तदोसं, तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं" ति॥

७. अजकलापकसुत्तं

[B.82] १३. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा पावायं विहरति अजकलापके चेतिये अजकलापकस्स यक्खस्स भवने। तेन खो पन समयेन भगवा रत्तन्धकारतिमिसायं अब्भोकासे [R.5] निसिन्नो होति; देवो च एकमेकं फुसायति। अथ खो अजकलापको यक्खो भगवतो भयं छम्भितत्तं लोमहंसं उप्पादेतुकामो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवतो [N.68] अविदूरे तिक्खत्तुं "अक्कुलो पक्कुलो" ति अक्कुलपक्कुलिकं अकासि—"एसो ते, समण, पिसाचो" ति।

१४. अथ खो भगवा एतमत्थं विदित्वा तायं वेलायं इमं उदानं उदानेसि—

"यदा सकेसु धम्मेसु, पारगू होति ब्राह्मणो।
अथ एतं पिसाचं च, पक्कुलञ्ञातिवत्तती" ति॥

भिक्षाटनहेतु राजगृह में प्रविष्ट हुए और सर्वथा दरिद्र, अकिञ्चन जुलाहे (कपड़ा बुनने वाले) का कार्य करने वालों की गली के किसी गृहद्वार पर जाकर खड़े हुए। भगवान् ने अपने दिव्य चक्षु से आयुष्मान् महाकाश्यप को भिक्षाहेतु गली केकिसी द्वार पर खड़े हुए देखा।

१२. तब भगवान् ने इस बात की गम्भीरता को समझते हुए अपना यह हृदयोद्गार प्रकट किया—

"दूसरों द्वारा अपने शरीर के पालन-पोषण में विश्वास न रखने वाले, अज्ञात (साधारण पुरुष) के समान जीवनयापन करने वाले, इन्द्रियविजयी, तत्त्वाधिगमहेतु सतत प्रयत्नशील, क्षीणाश्रव एवं दोषरहित साधक को ही मैं 'ब्राह्मण' कहता हूँ॥"

७. अजकलापकसूत्र : : ज्ञानी ब्राह्मण भूत-प्रेतों के भय से दूर

१३. ऐसा मैंने सुना है। एक समय भगवान् (बुद्ध) पावा नगरी के अजकलापक चैत्य में, जहाँ अजकलापक नाम का यक्ष रहता था, साधनाहेतु विराजमान थे। भगवान् कभी घोर अन्धेरी रात्रि में खुले आकाश के नीचे विराजमान थे। उस समय अजकलापक यक्ष, भगवान् को भयभीत करने हेतु, भगवान् के सम्मुख आया। आकर, उनके समीप ही खड़े होकर तीन बार 'अक्कुल पक्कुल' कहता हुआ अक्खो वक्खो (बच्चों को डराने वाली) ध्वनि करता हुआ यह बोला—"श्रमण! मैं पिशाच हूँ।"

१४. तब भगवान् ने उस पिशाच की यह क्रिया देखकर अपना यह उद्गार प्रकट किया—

"जब कोई ज्ञानी ब्राह्मण अपनी धर्मसाधना पूर्ण कर लेता है, तब वह ऐसे क्षुद्र पिशाच से या उसकी घिनौनी क्रियाओं (खो, खो) से कोई भय नहीं मानता॥" ●

उपादानपच्चया भवो, भवपच्चया जाति, जातिपच्चया जरामरणं सोकपरिदेवदुक्खदोमनस्सुपायासा सम्भवन्ति। एवमेतस्स केवलस्स दुक्खक्खन्धस्स समुदयो होती'' ति।

२. अथ खो भगवा एतमत्थं विदित्वा तायं वेलायं इमं उदानं उदानेसि—

[B.78] **''यदा हवे पातुभवन्ति धम्मा, आतापिनो झायतो ब्राह्मणस्स।**
अथस्स कङ्खा वपयन्ति सब्बा, यतो पजानाति सहेतुधम्मं'' ति॥

(म. व., वि. पि., पृ. ४

२. दुतियबोधिसुत्तं

[N.64, R.2] ३. एवं मे सुतं। एक समयं भगवा उरुवेलायं विहरति नज्जा नेरञ्जराय तीरे बोधिरुक्खमूले पठमाभिसम्बुद्धो। तेन खो पन समयेन भगवा सत्ताहं एकपल्लङ्केन निसिन्नो होति विमुत्तिसुखपटिसंवेदी। अथ खो भगवा तस्स सत्ताहस्स अच्चयेन तम्हा समाधिम्हा वुट्ठहित्वा रत्तिया मज्झिमं यामं पटिच्चसमुप्पादं पटिलोमं साधुकं मनसाकासि—

''इति इमस्मिं असति इदं न होति, इमस्स निरोधा इदं निरुज्झति; यदिदं—अविज्जानिरोधा सङ्खारनिरोधो, सङ्खारनिरोधा विञ्ञाणनिरोधो, विञ्ञाणनिरोधा नामरूपनिरोधो, नामरूपनिरोधा सळायतननिरोधो, सळायतननिरोधा फस्सनिरोधो, फस्सनिरोधा वेदनानिरोधो, वेदनानिरोधा तण्हानिरोधो, तण्हानिरोधा उपादाननिरोधो, उपादाननिरोधा

(विलाप=रोना, छाती पीटना), शारीरिक दुःख, दौर्मनस्य (मानसिक दुःख) तथा उपायास (पश्चात्ताप) उत्पन्न होते हैं। इस प्रकार इस समस्त दुःखस्कन्ध (संसार) का समुदय (उत्पाद) होता है।''

२. तब भगवान् ने प्रतीत्यसमुत्पाद की पद्धति से इस धर्म की गम्भीरता का चिन्तन मनन करते हुए यह हृदयोद्गार (उदान) प्रकट किया—

''जब किसी ध्यानाभ्यासरत, साधना में उत्साही एवं ज्ञानवान् विप्र को चिन्तन मनन करते करते उपर्युक्त धर्म पूर्णतः हृदयस्थ हो जाते हैं, तो इस प्रत्यय (हेतु) के सम्यग्ज्ञान के कारण, उस साधक की समस्त आकांक्षाओं (तृष्णाओं) का स्वतः उपशमन हो जाता है।'' (द्र० : म. व., वि. पि., पृष्ठ-४)

२. द्वितीय बोधिसूत्र　　: : प्रत्यय-क्षयज्ञान के कारण तृष्णाओं का उपशमन

३. ऐसा मैंने सुना है। एक समय भगवान् (बुद्ध) ऊरुवेला में...पूर्ववत्...रात्रि के मध्यम प्रहर में भगवान् ने प्रतीत्यसमुत्पाद नियम का आश्रयण कर **प्रतिलोम** क्रम से इस प्रकार चिन्तन मनन किया—

''इसके न होने पर यह नहीं होता, या इसके निरोध होने पर यह निरुद्ध हो जाता है; जैसे—अविद्या के निरोध से संस्कारों का निरोध हो जाता है; संस्कारों के निरोध से विज्ञान का निरोध; विज्ञान के निरोध से नामरूप का निरोध; नामरूप के निरोध से छह आयतनों का निरोध; छह आयतनों के निरोध से स्पर्श का निरोध; स्पर्श के निरोध से वेदना का निरोध;

अञ्ञतरो ब्राह्मणजातिको भिक्खु भगवन्तं एतदवोच—"कित्तावता नु खो, भन्ते, ब्राह्मणो होति, कतमे च पन ब्राह्मणकारणा धम्मा" ति?

१०. अथ खो भगवा एतमत्थं विदित्वा तायं वेलायं इमं उदानं उदानेसि—

[N.67] **"बाहित्वा पापके धम्मे, ये चरन्ति सदा सता।**
खीणसंयोजना बुद्धा, ते वे लोकस्मि ब्राह्मणा" ति॥

६. महाकस्सपसुत्तं

११. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा राजगहे विहरति वेळुवने कलन्दकनिवापे। तेन खो पन समयेन आयस्मा महाकस्सपो पिप्पलिगुहायं विहरति आबाधिको दुक्खितो बाळ्हगिलानो। अथ खो आयस्मा महाकस्सपो अपरेन समयेन तम्हा आबाधा वुट्ठासि। अथ खो आयस्मतो महाकस्सपस्स तम्हा आबाधा वुट्ठितस्स एतदहोसि—"यन्नूनाहं राजगहं पिण्डाय पविसेय्यं" ति।

तेन खो पन समयेन पञ्चमत्तानि देवतासतानि उस्सुक्कं आपन्नानि होन्ति आयस्मतो महाकस्सपस्स पिण्डपातपटिलाभाय। अथ खो आयस्मा महाकस्सपो तानि पञ्चमत्तानि देवतासतानि पटिक्खिपित्वा पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय राजगहं पिण्डाय पाविसि येन दलिद्दविसिखा कपणविसिखा पेसकारविसिखा। अद्दसा खो भगवा आयस्मन्तं महाकस्सपं राजगहे पिण्डाय चरन्तं येन दलिद्दविसिखा कपणविसिखा पेसकारविसिखा।

भगवान् द्वारा कथित यह वचन सुनकर, वहाँ श्रोताओं में बैठा कोई ब्राह्मण जाति से उत्पन्न भिक्षु उत्सुकतावश भगवान् से यह जिज्ञासा कर बैठा—"भन्ते ! किन गुणों के कारण कोई ब्राह्मण कहलाता है ?" या "ब्राह्मणकारक धर्म कौन होते हैं ?"

१०. तब भगवान् ने उस अवसर पर प्रश्न की गम्भीरता को समझते हुए यह हृदयोद्गार प्रकट किया—

"पापमय अकुशल धर्मों को दूर हटाकर, जे स्मृतिसम्प्रजन्यपूर्वक साधना करते हैं ऐसे साधक ही आश्रवक्षय होने पर ज्ञान प्राप्त कर लोक में 'ब्राह्मण' कहलाते हैं॥"

६. महाकाश्यपसूत्र : : क्षीणाश्रव एवं निर्दोष साधक ही 'ब्राह्मण'

११. ऐसा मैंने सुना है। एक समय भगवान् (बुद्ध) राजगृह के वेणुवनस्थित कलन्दक निवाप में साधना हेतु विराजमान थे। उस समय आयुष्मान् महाकाश्यप (राजगृह की) पिप्पलीगुफा में, अतिशय रुग्णावस्था में भी साधना कर रहे थे। कुछ समय बाद आयुष्मान् महाकाश्यप उक्त रोग से मुक्त होकर स्वस्थ हो गये। तब उनके मन में यह विचार हुआ—'क्यों न मैं आज राजगृह में भिक्षाटनहेतु चलूँ।"

उस समय पाँच सौ देवताओं ने आयुष्मान् महाकाश्यप को भिक्षा देने हेतु उत्सुकता दिखायी। परन्तु आयुष्मान् महाकाश्यप ने उन पाँच सौ देवताओं के भिक्षादान को ग्रहण करने में उपेक्षा दिखाते हुए, पूर्वाह्न में अपने शरीर के वस्त्र व्यवस्थित कर, पात्र चीवर लेकर

✪ नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स ✪

उदानपालि

१. बोधिवग्गो

१. पठमबोधिसुत्तं

[N.63, B.77, R.1] १. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा उरुवेलायं विहरति नज्जा नेरञ्जराय तीरे बोधिरुक्खमूले पठमाभिसम्बुद्धो। तेन खो पन समयेन भगवा सत्ताहं एकपल्लङ्केन निसिन्नो होति विमुत्तिसुखपटिसंवेदी। अथ खो भगवा तस्स सत्ताहस्स अच्चयेन तम्हा समाधिम्हा वुट्ठहित्वा रत्तिया पठमं यामं पटिच्चसमुप्पादं अनुलोमं साधुकं मनसाकासि—

"इति इमस्मिं सति इदं होति, इमस्सुप्पादा इदं उप्पज्जति; यदिदं—अविज्जापच्चया सङ्खारा, सङ्खारपच्चया विञ्ञाणं, विञ्ञाणपच्चया नामरूपं, नामरूपपच्चया सळायतनं, सळायतनपच्चया फस्सो, फस्सपच्चया वेदना, वेदनापच्चया तण्हा, तण्हापच्चया उपादानं,

---

✪ उन भगवान् अर्हत् सम्यक्सम्बुद्ध को प्रणाम ✪

उदानपालि

१. बोधिवर्ग

१. प्रथमबोधिसूत्र : : साधक की तृष्णाओं का उपशमन

१. ऐसा मैंने सुना है। एक समय भगवान् (बुद्ध) ऊरुवेला में नेरञ्जरा नदी के तट पर स्थित बोधिवृक्ष की छाया में विराजमान थे। जबकि वे प्रथम अभिसम्बोधि कुछ ही समय पूर्व प्राप्त कर चुके थे। तब भगवान् उस बोधिवृक्ष के नीचे सप्ताहपर्यन्त, एक ही आसन से समाधिस्थित रहकर, अनुपम विमुक्तिसुख का अनुभव करते रहे। तदनन्तर, उस सप्ताह के व्यतीत होने के बाद, उस समाधि से उठकर, रात्रि के प्रथम प्रहर में भगवान् ने प्रतीत्यसमुत्पाद (किसी हेतु या प्रत्यय से उत्पत्ति के नियम) का आश्रयण कर **अनुलोमक्रम** से इस प्रकार चिन्तन मनन किया—

"इसके होने पर यह होता है, या इसकी उत्पत्ति से यह उत्पन्न होता है; जैसे—अविद्या के कारण (हेतु) से संस्कार उत्पन्न होते हैं; संस्कारों के कारण विज्ञान; विज्ञान के कारण नामरूप; नामरूप के कारण छह आयतन; छह आयतनों के कारण स्पर्श; स्पर्श के कारण वेदना; वेदना के कारण तृष्णा; तृष्णा के कारण उपादान (परिग्रह); उपादान के कारण भव; भव के कारण जाति (जन्म); जाति के कारण जरा (बुढ़ापा), मरण, शोक, परिदेव

मुचलिन्दमूले पठमाभिसम्बुद्धो। तेन खो पन समयेन भगवा सत्ताहं एकपल्लङ्केन निसिन्नो होति विमुत्तिसुखपटिसंवेदी।

तेन खो पन समयेन महा अकालमेघो उदपादि सत्ताहवद्दलिका सीतवातदुद्दिनी। अथ खो मुचलिन्दो नागराजा सकभवना निक्खमित्वा भगवतो कायं सत्तक्खत्तुं भोगेहि परिक्खिपित्वा उपरिमुद्धनि महन्तं फणं विहच्च अट्ठासि—"मा भगवन्तं सीतं, मा भगवन्तं उण्हं, मा भगवन्तं डंसमकसवातातपसरीसपसम्फस्सो" ति।

अथ खो भगवा तस्स सत्ताहस्स अच्चयेन तम्हा समाधिम्हा वुट्ठासि। अथ खो मुचलिन्दो नागराजा विद्धं विगतवलाहकं देवं विदित्वा भगवतो काया भोगे विनिवेठेत्वा सकवण्णं पटिसंहरित्वा माणवकवण्णं अभिनिम्मिनित्वा भगवतो पुरतो अट्ठासि पञ्जलिको भगवन्तं नमस्समानो।

(B.88) २. अथ खो भगवा एतमत्थं विदित्वा तायं वेलायं इमं उदानं उदानेसि—

"सुखो विवेको तुट्ठस्स, सुतधम्मस्स पस्सतो।
अब्यापज्जं सुखं लोके, पाणभूतेसु संयमो॥"

---

२. मुचलिन्दवर्ग

१. मुचलिन्दसूत्र : : नागराज मुचलिन्द के प्रति भगवान् की प्रसन्नता

१. ऐसा मैंने सुना है। एक समय भगवान् (बुद्ध) ऊरुवेला में नेरञ्जरा नदी के तट पर स्थित मुचलिन्द वृक्ष की छाया में विराजमान थे। उस समय उनको अभिसम्बोधि प्राप्त हुए कुछ ही समय बीता था। तब भगवान् उस मुचलिन्द वृक्ष की छाया में सप्ताहपर्यन्त, एक ही आसन से विराजमान (समाधिनिष्ठ) रहते हुए अनुपम विमुक्तिसुख का अनुभव करते रहे।

इसी अन्तराल में, वहाँ असमय में (ऋतु के विना) ही काली घटाओं वाले तथा सप्ताह-पर्यन्त टिके रहने वाले बड़े बड़े बादल आकाश में उमड़ आये, जिनके कारण होती हुई वर्षा से शरीर को कष्टदायक ठण्ठी हवाएँ बहने लगीं। तब मुचलिन्द नाम का एक नागराज (विशाल सर्प) अपने भवन (बिल) से निकल कर भगवान् के शरीर पर अपना शरीर सात बार लपेट कर, तथा उनके शिर पर अपना फण फैलाकर, इसलिये बैठा रहा कि इस दुर्दिन में भगवान् के शरीर पर ठण्ढी या गर्म ऋतु का कोई दुष्प्रभाव न पड़े, और न ही किसी मच्छर मक्खी या साँप बिच्छू के काटने से कोई वेदना हो।

तदनन्तर, एक सप्ताह का समय बीतने पर, भगवान् का उस समाधि से उत्थान हुआ। उधर, मुचलिन्द नागराज भी आकाश में घिरी हुई घटाओं के बिखर जाने पर, ऋतु के अनुकूल हो जाने पर, भगवान् के शरीर पर लिपटे हुए अपने शरीर को हटाकर, मानव शरीर धारण कर, हाथ जोड़कर प्रणाम करता हुआ भगवान् के सम्मुख खड़ा हो गया।

२. तब भगवान् ने मुचलिन्द नागराज द्वारा उनके प्रति की गयी सेवा से प्रसन्न होकर उस समय यह हृदयोद्गार प्रकट किया—

"सुखा विरागता लोके, कामानं समतिक्कमो।
अस्मिमानस्स यो विनयो, एतं वे परमं सुखं" ति॥

(म. व., वि. पि., पि. ६)

२. राजसुत्तं

१. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति जेतवने अनाथपिण्डिकस्स [N.74, R.11] आरामे। तेन खो पन समयेन सम्बहुलानं भिक्खूनं पच्छाभत्तं पिण्डपात-पटिक्कन्तानं उपट्ठानसालायं सन्निसिन्नानं सन्निपतितानं अयमन्तराकथा उदपादि—"को नु खो, आवुसो, इमेसं द्विन्नं राजूनं महद्धनतरो वा महाभोगतरो वा महाकोसतरो वा महा-विजिततरो वा महावाहनतरो वा महब्बलतरो वा महिद्धिकतरो वा महानुभावतरो वा राजा वा मागधो सेनियो बिम्बिसारो राजा वा पसेनदि कोसलो" ति? अयञ्चरहि तेसं भिक्खूनं अन्तराकथा होति विप्पकता।

अथ खो भगवा सायण्हसमयं पटिसल्लाना वुट्ठितो येनुपट्ठानसाला तेनुपसङ्कमि; उप-सङ्कमित्वा पञ्ञत्ते आसने निसीदि। निसज्ज खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—"काय नुत्थ, भिक्खवे, एतरहि कथाय सन्निसिन्ना सन्निपतिता, का च पन वो अन्तराकथा विप्पकता" ति?

"इध, भन्ते, अम्हाकं पच्छाभत्तं पिण्डपातपटिक्कन्तानं उपट्ठानसालायं सन्निसिन्नानं

"सर्वथा यथालाभ सन्तुष्ट एवं धर्ममर्मज्ञ साधक एकान्तवास में ही सुख मानता है। लोक में सभी प्राणियों में संयम का व्यवहार करना निर्द्वन्द्व सुख का द्योतक है॥

"कामभोगों से दूर रहना तथा उनके प्रति वैराग्य ही लोक में परमसुख है। इसी प्रकार, लौकिक पदार्थों में अपने अहन्त्व ममत्व (अस्मिमान) का नाश भी परम सुख है॥"

(द्र० : म. व., वि. पि., पृष्ठ-६) ●

२. राजसूत्र : :

१. ऐसा मैंने सुना है। एक समय भगवान् (बुद्ध) श्रावस्ती में अनाथपिण्डिक श्रेष्ठी द्वारा निर्मापित जेतवनविहार में साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय, भोजनानन्तर, सभाभवन में एकत्र बहुत से भिक्षुओं में यह वार्ता-प्रसङ्ग आरम्भ हो गया कि मगधसम्राट् श्रेणिय बिम्बिसार एवं राजा प्रसेनजित् कौसल—इन दोनों में कौन अधिक धनवान्, ऐश्वर्यवान्, ऋद्धिमान्, आनुभावसम्पन्न (प्रतापी) या अधिक सेना वाला और अधिक भूप्रदेश पर शासन करने वाला, या अधिक हस्तिसेना एवं अश्वसेना वाला है?" यह प्रसङ्ग अधूरा ही रह गया।

क्योंकि उसी समय भगवान् सायङ्कालीन साधना से उठकर उस सभाभवन में पधारे। पधार कर प्रज्ञप्त आसन पर विराजमान हुए। वहाँ विराज कर उपस्थित भिक्षुओं से उनने पूछा—"भिक्षुओ! इस समय एकत्र हुए तुम लोगों में क्या प्रसङ्ग चल रहा था?"

"भन्ते! हम लोग यहाँ यही बात कर रहे थे कि मगध सम्राट् श्रेणिय बिम्बिसार...

सन्निपतितानं अयमन्तराकथा उदपादि—'को नु खो, आवुसो, इमेसं द्विन्नं राजूनं महद्धनतरो वा महाभोगतरो वा महाकोसतरो वा महाविजिततरो वा महावाहनतरो वा महब्बलतरो वा महिद्धिकतरो वा महानुभावतरो वा राजा वा मागधो सेनियो बिम्बिसारो राजा वा पसेनदि कोसलो' ति ? अयं खो नो, भन्ते, अन्तराकथा विप्पकता, अथ भगवा अनुप्पत्तो'' ति।
[II.89] ''न ख्वेतं, भिक्खवे, तुम्हाकं पतिरूपं कुलपुत्तानं सद्धा अगारस्मा अनगारियं पब्बजितानं यं तुम्हे एवरूपिं कथं कथेय्याथ। सन्निपतितानं वो, भिक्खवे, द्वयं करणीयं— धम्मी वा कथा अरियो वा तुण्हीभावो'' ति।

४. अथ खो भगवा एतमत्थं विदित्वा तायं वेलायं इमं उदानं उदानेसि—

''यं च कामसुखं लोके, यञ्चिदं दिवियं सुखं।
तण्हक्खयसुखस्सेते, कलं नाग्घन्ति सोळसिं'' ति॥

३. दण्डसुत्तं

[II.76] ५. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति जेतवने अनाथपिण्डिकस्स आरामे। तेन खो पन समयेन सम्बहुला कुमारका अन्तरा च सावत्थिं अन्तरा च जेतवनं अहिं दण्डेन हनन्ति। अथ खो भगवा पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय सावत्थिं पिण्डाय पाविसि। अद्दसा खो भगवा सम्बहुले कुमारके अन्तरा च सावत्थिं अन्तरा च जेतवनं अहिं
[R.12] दण्डेन हनन्ते।

६. अथ खो भगवा एतमत्थं विदित्वा तायं वेलायं इमं उदानं उदानेसि—

पूर्ववत्...अश्वसेना वाला है ? बात अधूरी रह गयी; क्योंकि इसी समय आपका यहाँ पधारना हो गया।''

''भिक्षुओ ! ऐसी लौकिक बातें करना तुम जैसे प्रव्रजित लोगों के लिये उचित नहीं है। तुम्हें इस तरह एकत्र होकर बैठने पर दो ही कर्म करणीय हैं—१. धार्मिक कथा या २. आर्य जनोचित तूष्णीम्भाव (=चुप रहना, मौन रहना)।

४. तब भगवान् ने प्रसङ्ग की गम्भीरता को ध्यान में रखते हुए यह उद्गार प्रकट किया—

''लौकिक कामभोग तथा स्वर्ग में प्राप्त होने वाले दिव्य सुख—ये दोनों ही सुख तृष्णाक्षय से प्राप्त हुए सुख की, सोलहवें अंश में भी, समानता नहीं करते॥'' ●

३. दण्डसूत्र : : दूसरों पर दण्ड प्रहार करने वाला सुखी नहीं हो सकता

५. ऐसा मैंने सुना है। एक समय भगवान (बुद्ध) श्रावस्ती के अनाथपिण्डक श्रेष्ठी द्वारा निर्मापित जेतवन विहार में साधना हेतु विराजमान थे। उस समय बहुत से कुमार (युवक) भिक्षु श्रावस्ती एवं जेतवन के मध्य मार्ग में एकत्र होकर किसी सर्प को दण्ड से मार रहे थे। उसी समय भगवान प्रातःकाल भिक्षाचर्या हेतु श्रावस्ती में जा रहे थे। भगवान् ने उन कुमार भिक्षुओं को दण्ड से सर्प को मारते हुए देखा।

६. तब भगवान् ने इस क्रिया की गम्भीरता को देखते हुए यह हृदयोद्गार प्रकट किया—

पच्चया वेदना, वेदनापच्चया तण्हा, तण्हापच्चया उपादानं, उपादानपच्चया भवो, भवपच्चया जाति, जातिपच्चया जरामरणं सोकपरिदेवदुक्खदोमनस्सुपायासा सम्भवन्ति। एवमेतस्स केवलस्स दुक्खक्खन्धस्स समुदयो होति।''

''अविज्जाय त्वेव असेसविरागनिरोधा सङ्खारनिरोधो, सङ्खारनिरोधा विञ्ञाणनिरोधो, विञ्ञाणनिरोधा नामरूपनिरोधो, नामरूपनिरोधा सळायतननिरोधो, सळायतननिरोधा फस्सनिरोधो, फस्सनिरोधा वेदनानिरोधो, वेदनानिरोधा तण्हानिरोधो, तण्हानिरोधा उपादाननिरोधो, उपादाननिरोधा भवनिरोधो, भवनिरोधा जातिनिरोधो, जातिनिरोधा जरा-
[R.3] मरणं सोकपरिदेवदुक्खदोमनस्सुपायासा निरुज्झन्ति। एवमेतस्स केवलस्स दुक्खक्खन्धस्स निरोधो होती'' ति।

६. अथ खो भगवा एतमत्थं विदित्वा तायं वेलायं इमं उदानं उदानेसि—

''यदा हवे पातुभवन्ति धम्मा, आतापिनो झायतो ब्राह्मणस्स।
विधूपयं तिट्ठति मारसेनं, सुरियो व ओभासयमन्तलिक्खं'' ति॥

(म. व., वि. पि., पि. ५)

४. हुंहुङ्कसुत्तं

[B.80] ७. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा उरुवेलायं विहरति नज्जा नेरञ्जराय तीरे अजपाल-निग्रोधे पठमाभिसम्बुद्धो। तेन खो पन समयेन भगवा सत्ताहं एकपल्लङ्केन निसिन्नो होति विमुत्तिसुखपटिसंवेदी। अथ खो भगवा तस्स सत्ताहस्स अच्चयेन तम्हा समाधिम्हा वुट्ठासि।
[N.66] अथ खो अञ्ञतरो हुंहुङ्कजातिको ब्राह्मणो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवता सद्धिं सम्मोदि। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं अट्ठासि। एक-

---

प्रतिलोमक्रम—''अविद्या से सर्वथा वैराग्य हो जाने के कारण उसका पूर्ण निरोध (नाश) हो जाने से संस्कारों का निरोध हो जाता है; संस्कारों के निरोध से...पूर्ववत्...। इस प्रकार, इस समस्त दु:खस्कन्ध का निरोध हो जाता है।''

६. भगवान् ने इस वास्तविकता को जानकर, उस समय यह हृदयोद्गार प्रकट किया—
''जब किसी उत्साही, ध्यानी एवं ज्ञानी विप्र (ब्राह्मण) को चिन्तन-मनन करते हुए ये उपर्युक्त धर्म पूर्णत: हृदयस्थ हो जाते हैं; तब यह (ज्ञानी) समस्त मारसेना को परास्त करता हुआ लोक में उसी तरह देदीप्यमान होता है, जैसे कि मध्याह्न में आकाशस्थ सूर्य आलोकित रहता है॥''

(द्र० : म. व., वि. पि., पृष्ठ-५)

४. हुंहुङ्कसूत्र : : पापधर्मरहित पुरुष ही ब्राह्मण कहलाने योग्य

७. ऐसा मैंने सुना है। एक समय भगवान् (बुद्ध) ऊरुवेला में...पूर्ववत्...। तब भगवान् उस सप्ताह के व्यतीत होने पर उस समाधि से उठे।

तब कोई हुंहुङ्क जाति का ब्राह्मण जहाँ भगवान् विराजमान थे वहाँ आया। आकर उसने भगवान् से उनका कुशल क्षेम पूछा। कुशल क्षेम प्रश्नान्तर वह एक ओर खड़ा हो गया। एक